शहरी नियोजन

हरिनी नागेंद्र

जलवायु संकट के दौर में प्रकृति-सम्मत शहर

अत्यधिक जलवायु परिवर्तन के इस दौर में पारिस्थितिकी का महत्त्व कम नहीं होता, बल्कि यह और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। शहरी जलवायु चर्चाओं में तेज़ी से 'प्रकृति-आधारित समाधानों' (नेचर-बेस्ड सॉल्यूशंस - एनबीएस) पर ध्यान दिया जा रहा है। दुनियाभर में, सरकारें, विकास एजेंसियां और वित्तीय संस्थान अब जलवायु लचीलापन हासिल करने के एक मार्ग के रूप में एनबीएस को बढ़ावा दे रहे हैं।

भारतीय शहरों में रहने वाले अनेक लोगों के लिए जलवायु परिवर्तन अब 2100 वर्ष के दूरस्थ भविष्य की कोई आशंका नहीं रह गया है, जिसे केवल वैज्ञानिक रिपोर्टों या भविष्यवाणियों के माध्यम से समझा जाए। यह अब उनके दैनिक जीवन में होने वाली बाधाओं और कठिनाइयों के रूप में अनुभव किया जा रहा है। ये समस्याएं न केवल शहरी नियोजन की कमी को दर्शाती हैं, बल्कि यह भी बताती हैं कि चरम मौसम संबंधी घटनाएं अब अपवाद नहीं, बल्कि लगभग हर वर्ष घटित होने वाली वास्तविकताएं बन चुकी हैं। इसलिए केरल में भारी मानसूनी वर्षा के कारण लोगों को आवागमन के लिए जलमग्न सड़कों पर नावों का सहारा लेना पड़ता है। चेन्नई के बड़े हिस्सों में भीषण गर्मी के दौरान बिजली आपूर्ति बाधित हो जाती है। बेंगलुरु के वे इलाके, जहां कभी झीलें हुआ करती थीं, अब अपने अस्तित्व के लिए गहराई से निकाले गए भूजल पर निर्भर टैंकरों से पानी प्राप्त करते हैं। मुंबई में निर्माण श्रमिक, फ्लाईओवरों के नीचे शरण लेने को विवश हैं क्योंकि शहर में छायादार सार्वजनिक स्थानों की कमी हो गई है। वहीं दिल्ली में सर्दियों के दौरान वायु प्रदूषण के खतरनाक स्तर तक पहुंच जाने के कारण बच्चों को विद्यालयों में भीतर ही रहने के लिए कहा जाता है।

झीलें, आर्द्रभूमि और वृक्ष : शहरी जीवन के प्राकृतिक संरक्षक

बाढ़, अत्यधिक गर्मी, वायु प्रदूषण, जल संकट और सार्वजनिक स्वास्थ्य जैसी समस्याओं को अक्सर अलग-अलग शहरी पर्यावरणीय और जलवायु परिवर्तन के समस्याओं के रूप में देखा जाता है, जबकि वास्तव में ये सभी गहराई से एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। ये भारतीय शहरों की मूलभूत स्थिति के बारे में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य उजागर करती हैं। एक समय था जब भारतीय शहर प्रकृति के कारण फलते-फूलते थे। शहरों में पार्क, नदियां, झीलें, आर्द्रभूमि और घास के मैदान थे, जो जल उपलब्ध कराते थे, वातावरण को ठंडा रखते थे तथा शहरी आजीविका और अर्थव्यवस्था को सहारा देते थे। किंतु पिछले कुछ दशकों में भारत के शहरी विकास ने प्रकृति को या तो विकास की बाधा माना या फिर प्राकृतिक क्षेत्रों को अनुपयोगी "बंजर भूमि" समझा।

आर्द्रभूमि और झीलों को रियल एस्टेट (अचल संपत्ति) परियोजनाओं के लिए कंक्रीट से भर दिया गया, सड़कों ने झीलों को खंडित कर दिया, नदियां प्रदूषण के कारण झाग से भर गई और सड़क चौड़ीकरण तथा आधारभूत संरचना परियोजनाओं के लिए बड़ी संख्या में पेड़ों की कटाई हुई। आज अधिकांश भारतीय शहरों में प्राकृतिक क्षेत्र केवल छोटे-छोटे अलग-थलग हिस्सों के रूप में बचे हैं, जिनका आसपास के प्राकृतिक परिदृश्य से संबंध लगभग टूट चुका है।

फिर भी शहरों में प्रकृति एक ऐसी सार्वजनिक आधारभूत संरचना के रूप में कार्य करती है, जो शहरी जीवन को संभव बनाती है। एक झील केवल जल स्त्रोत नहीं होती। वह बाढ़ को नियंत्रित करती है, भूजल पुनर्भरण में सहायता करती है, स्थानीय तापमान को संतुलित रखती है और जैव विविधता को बनाए रखती है। इसी प्रकार पेड़ केवल सड़कों की सुंदरता नहीं बढ़ाते, बल्कि वे पैदल चलने वाले लोगों को छाया प्रदान करते हैं, खुले में काम करने वाले श्रमिकों को गर्मी से राहत देते हैं और घनी आबादी वाले क्षेत्रों का तापमान कम करते हैं।

लेखिका बेंगलुरु स्थित अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के 'स्कूल ऑफ़ क्लाइमेट चेंज एंड सस्टेनेबिलिटी' की निदेशक हैं। ईमेलः harini.nagendra@apu.edu.in

पूर्वी कोलकाता आर्द्रभूमि, अपनी विशिष्ट पारिस्थितिकीय और आजीविका संबंधी विशेषताओं के लिए मान्यता प्राप्त एक रामसर स्थल

आर्द्रभूमि कोई खाली भूमि नहीं हैं जो विकास की प्रतीक्षा कर रही हों। वे अतिरिक्त वर्षा जल को अवशोषित करती हैं और निचले क्षेत्रों में बाढ़ की तीव्रता को कम करती हैं। इन प्राकृतिक तंत्रों का वास्तविक महत्त्व अक्सर तभी स्पष्ट होता है जब वे नष्ट हो जाते हैं।

भारतीय शहरों से सीख : प्रकृति की संरक्षक भूमिका

भारतीय शहरों में ऐसे कई महत्त्वपूर्ण उदाहरण आज भी मौजूद हैं। 'पूर्वी कोलकाता आर्द्रभूमि' कोलकाता के लिए अपशिष्ट जल शोधन, मत्स्य पालन, बाढ़ के जल के अवशोषण तथा नियंत्रण और जैव विविधता संरक्षण का कार्य करती हैं तथा हजारों लोगों की आजीविका का आधार हैं। इसी प्रकार मुंबई में स्थित "संजय गांधी राष्ट्रीय उद्यान" शहर के लिए एक महत्त्वपूर्ण पारिस्थितिक सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करता है। यह दुनिया के सबसे घनी आबादी वाले महानगर के तापमान को नियंत्रित करता है, जैव विविधता को संरक्षित रखता है तथा जलग्रहण क्षेत्रों की रक्षा करता है। मुंबई के मैंग्रोव वन भी तटीय बाढ़ को कम करने और अत्यधिक वर्षा के दौरान ज्वारीय लहरों के प्रभाव को नियंत्रित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये एकाकी पर्यावरणीय संपत्तियां नहीं हैं, बल्कि शहरी आधारभूत संरचना के प्रभावी और कार्यशील रूप हैं।

फिर भी शहरी प्रशासन इन समस्याओं को अक्सर अलग-अलग मुद्दों के रूप में देखता है। गर्मी से निपटने के लिए चेतावनी और परामर्श जारी किए जाते हैं। बाढ़ को केवल जल निकासी की समस्या माना जाता है। वायु प्रदूषण पर परिवहन और उद्योगों के संदर्भ में चर्चा होती है। जैव विविधता को शहरी नियोजन से अलग एक संरक्षण संबंधी विषय समझा जाता है। यह खंडित दृष्टिकोण इस तथ्य की अनदेखी करता है कि पारिस्थितिक तंत्र अक्सर इन अनेक संकटों का एक साथ समाधान कर सकते हैं। 'प्रकृति-आधारित समाधान' झीलों, आर्द्रभूमि और हरित क्षेत्रों को पुनः जोड़ने में सहायता कर सकते हैं, जिन्हें अनियोजित शहरी विस्तार ने धीरे-धीरे अलग-थलग कर दिया है।

छोटे हरित हस्तक्षेप, बड़े शहरी लाभ

अत्यधिक जलवायु परिवर्तन के इस दौर में पारिस्थितिकी का महत्त्व कम नहीं होता, बल्कि यह और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। शहरी जलवायु चर्चाओं में तेज़ी से 'प्रकृति-आधारित समाधानों' पर ध्यान दिया जा रहा है। दुनियाभर में सरकारें, विकास एजेंसियां और वित्तीय संस्थान अब जलवायु लचीलापन हासिल करने के एक मार्ग के रूप में एनबीएस को बढ़ावा दे रहे हैं। यही कारण है कि आर्द्रभूमि पुनर्स्थापन, शहरी वन, मैंग्रोव संरक्षण, बायोस्वेल्स (वर्षाजल को सोखने वाली हरित जलनिकासी संरचनाएं), हरित गलियारों तथा ब्लू-ग्रीन अवसंरचना को जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के प्रभावी साधनों के रूप में देखा जा रहा है।

घनी आबादी वाले और भूमि की दृष्टि से सीमित भारतीय शहरों में हमें प्रकृति-आधारित समाधानों (एनबीएस) की अवधारणा का विस्तार करना होगा, ताकि इसमें दैनिक शहरी जीवन में समाहित छोटे

तथा शहर में विभिन्न स्थानों पर फैले पारिस्थितिक अवसंरचना तंत्र भी शामिल हो सकें।

फ्लाईओवरों के नीचे की जगहें, सड़कों के मध्य भाग, नहरों के किनारे, रेलवे बफर क्षेत्र, खाली सार्वजनिक भूमि, छतें, संस्थागत परिसरों और वर्षाजल निकासी तंत्रों को प्रायः पारिस्थितिक संपदा के रूप में नहीं देखा जाता। किंतु यदि इन्हें पड़ोस स्तर पर आपस में जोड़ा जाए, तो ये शहरी तापमान कम करने, वर्षाजल को अवशोषित करने तथा जैव विविधता को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

ऐसे स्थानों में सुविचारित शहरी हरितीकरण के माध्यम से वृक्षों से आच्छादित सड़कें, छायादार बस स्टॉप, सड़कों के किनारे बायोस्वेल्स, आवासीय परिसरों में वर्षा उद्यान, पुनर्जीवित झीलें, जल-पारगम्य पथ, शहरी कृषि क्षेत्र तथा संस्थानों और तकनीकी पार्कों में स्थानीय प्रजातियों की वनस्पतियों जैसी नई प्रकृति-आधारित व्यवस्थाएं विकसित की जा सकती हैं। ये उपाय गर्मी के प्रभाव को कम करने, भूजल पुनर्भरण बढ़ाने, वर्षाजल को अवशोषित करने तथा चरम मौसम के दौरान सार्वजनिक स्थानों को अधिक उपयोगी बनाने में सहायक हो सकते हैं।

यद्यपि ये हस्तक्षेप बड़ी अवसंरचना परियोजनाओं की तुलना में छोटे दिखाई दे सकते हैं, किंतु वास्तव में ये पड़ोस स्तर पर लोगों के शहरी अनुभव को गहराई से प्रभावित करते हैं। भीषण गर्मी में काम करने वाले किसी फेरीवाले के लिए छायादार फुटपाथ अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। बार-बार बाढ़ का सामना कर रहे समुदायों के लिए पुनर्जीवित झील जीवनरेखा साबित हो सकती है। यहां तक कि व्यस्त सड़क के किनारे स्थित वनस्पति का एक छोटा-सा भाग भी वायु गुणवत्ता सुधार सकता है और अत्यधिक गर्मी में लोगों के सड़क के अनुभव को बदल सकता है।

पर्यावरणीय जोखिम और सामाजिक असमानताएं

यह विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि भारतीय शहरों में पर्यावरणीय जोखिम समान रूप से वितरित नहीं हैं। गर्मी, प्रदूषण, बाढ़ और जल संकट का सबसे अधिक प्रभाव उन लोगों पर पड़ता है जिनके पास इनसे निपटने के संसाधन सबसे कम होते हैं। अनौपचारिक बस्तियों में रहने वाले लोग, स्वच्छता कर्मी, डिलीवरी कर्मी, निर्माण श्रमिक और वृद्धजन, जलवायु जोखिमों का सामना अपेक्षाकृत अधिक प्रत्यक्ष रूप से करते हैं, जबकि संपन्न वर्ग वातानुकूलित भवनों और निजी सुविधाओं का सहारा ले सकता है। इसलिए भारतीय शहरों में पारिस्थितिकी से जुड़े प्रश्न वास्तव में असमानता और सामाजिक न्याय के प्रश्न भी हैं।

सावधानीपूर्वक बनाई गई योजनाओं के बिना शहरी हरितीकरण स्वयं भी असमानता को बढ़ा सकता है। अनेक शहरों में ऐसे सौंदर्यीकरण प्रयास देखे गए हैं जो अभिजात्य वर्ग की सौंदर्य संबंधी प्राथमिकताओं को महत्त्व देते हैं, जबकि पारंपरिक उपयोगकर्ताओं और निम्न-आय वर्गों की पहुंच सीमित कर देते हैं। झीलों को साझा सार्वजनिक संसाधनों के बजाय घिरे हुए मनोरंजन स्थलों में बदल दिया जाता है। सार्वजनिक परिदृश्यों को इस प्रकार पूर्ण विकसित किया जाता है कि अनौपचारिक आजीविकाएं और दैनिक उपयोग उससे बाहर हो जाएं। यदि संवेदनशील और वंचित समुदायों को पुनर्स्थापन तथा नियोजन संबंधी निर्णयों से बाहर रखा जाता है, तो प्रकृति-आधारित समाधान सफल नहीं हो सकते।

यह स्थिति भारतीय शहरों की 'हीट एक्शन योजनाओं' में भी स्पष्ट दिखाई देती है। अधिकांश योजनाएं अभी भी चेतावनियों और स्वास्थ्य परामर्श जैसी आपातकालीन प्रतिक्रियाओं पर केंद्रित हैं। यद्यपि ये आवश्यक हैं, लेकिन ये

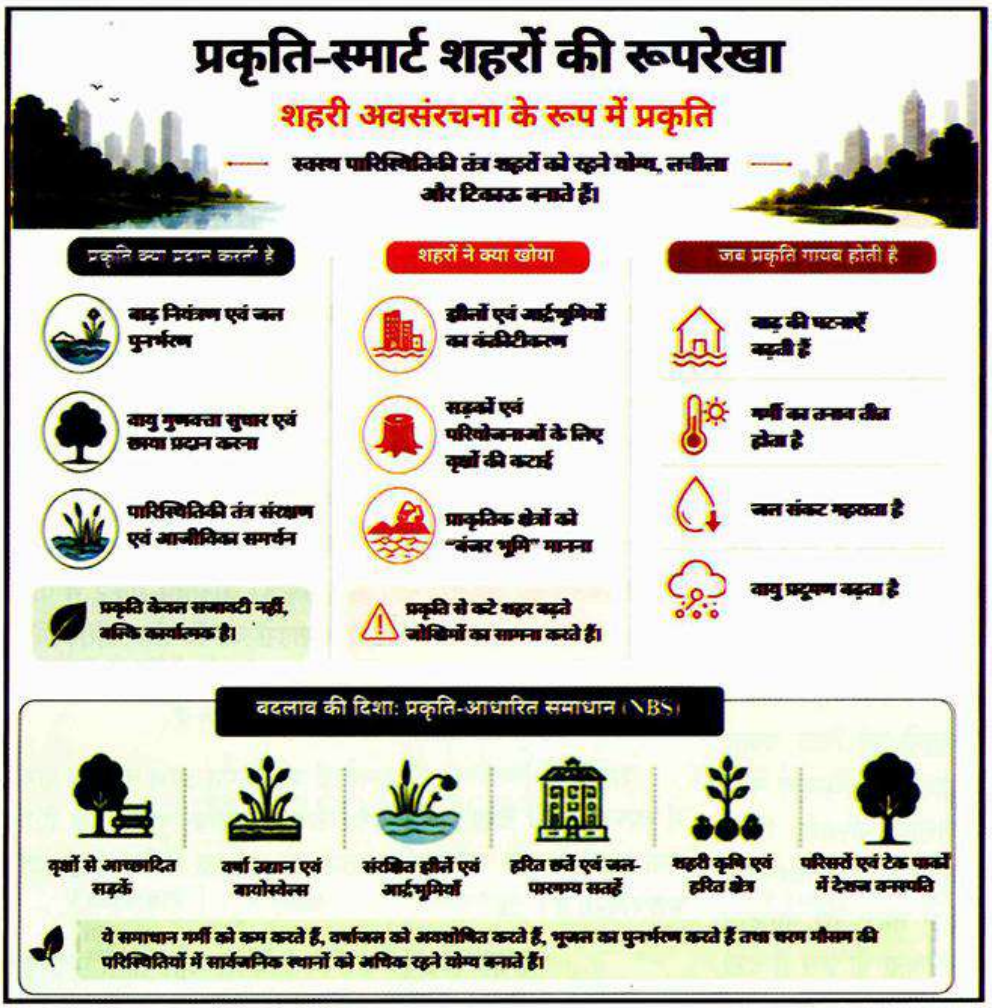

इस मूल प्रश्न को संबोधित नहीं करतीं कि कुछ क्षेत्रों में गर्मी का प्रभाव अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक क्यों होता है।

प्रकृति में निवेश नहीं, शहरों की सुरक्षा में निवेश

दीर्घकालिक ताप-सहिष्णुता के लिए आवश्यक है कि पारिस्थितिक सोच को शहरी नियोजन के मूल ढांचे में शामिल किया जाए। पेड़, आर्द्रभूमि, जल-पारगम्य भू-दृश्य और ब्लू-ग्रीन गलियारे प्रायः केवल सौंदर्यीकरण परियोजनाओं के रूप में देखे जाते हैं, जबकि वास्तव में वे पूरे शहर में गर्मी के प्रभाव को सीधे प्रभावित करते हैं तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य और जीवन को बेहतर बनाते हैं।

इसी कारण प्रकृति-आधारित समाधानों पर चर्चा को केवल 'प्रकृति में निवेश' की संकीर्ण अवधारणा तक सीमित नहीं रखा जा सकता। प्रकृति हमेशा ऐसे प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ नहीं देती जिन्हें पारंपरिक बाज़ार प्रणालियां आसानी से माप सकें। इसका वास्तविक मूल्य अक्सर हानि को रोकने, जोखिमों को कम करने और समय के साथ शहरी प्रणालियों को स्थिर बनाए रखने में निहित होता है।

जब आर्द्रभूमि समाप्त हो जाती हैं, तो शहरों में बाढ़ का खतरा बढ़ जाता है। जब वृक्षों का आवरण घटता है, तो गर्मी का तनाव और स्वास्थ्य संबंधी व्यय बढ़ जाते हैं। मैंग्रोव तटीय जोखिमों को कम करते हैं और जैव विविधता पारिस्थितिक सहिष्णुता मज़बूत करती है। ये लाभ भले ही तत्काल लाभांश के रूप में दिखाई न दें, लेकिन इनके समाप्त होने की कीमत शहरों को भारी रूप से चुकानी पड़ती है।

भारतीय शहर पहले से ही सड़कों, जल निकासी प्रणालियों, शीतलन तकनीकों और आपदा-प्रतिक्रिया व्यवस्थाओं पर भारी व्यय करते हैं, क्योंकि इन्हें शहरी संचालन के लिए अनिवार्य माना जाता है। इसके विपरीत, नगर निगमों के बजट में आर्द्रभूमि, शहरी वनों, जल-पारगम्य भू-दृश्यों और परस्पर जुड़े जल तंत्रों के दीर्घकालिक मूल्य को शायद ही कभी समुचित स्थान मिलता है।

शहरी नियोजन और बजट में पारिस्थितिकी का एकीकरण

परिणामस्वरूप, जोखिमों को कम करने वाली आर्द्रभूमि, पेड़ों और जल प्रणालियों पर शहर हमेशा से ही अपेक्षाकृत कम खर्च करते आए हैं, जबकि बाढ़, गर्मी और अन्य आपदाओं के बाद की प्रतिक्रियात्मक व्यवस्थाओं पर कहीं अधिक धन व्यय करते हैं।

चुनौती मूलतः संस्थागत और राजनीतिक है कि शहर अपनी योजना और बजट निर्णयों में पारिस्थितिक तंत्रों को किस प्रकार दृश्यमान और महत्त्वपूर्ण बना सकते हैं? यह चुनौती केवल नगर प्रशासनों तक सीमित नहीं है। बड़े आवासीय परिसरों, निजी टाउनशिपों, वाणिज्यिक डेवलपर्स, औद्योगिक पार्कों और तकनीकी परिसरों का भी आज शहरी भारत के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। फिर भी प्रकृति को आवश्यक शहरी अवसंरचना के रूप में देखे जाने की बजाय, प्रायः केवल सजावटी उद्यानों तक सीमित कर दिया जाता हैं।

यदि भवन निर्माण नियमों, नियोजन स्वीकृतियों और शहरी डिज़ाइन में सार्थक प्रकृति-आधारित समाधानों को शामिल किया जाए, तो इससे गर्मी कम करने, वर्षाजल अवशोषण बढ़ाने, जैव विविधता को प्रोत्साहित करने और जल सुरक्षा मज़बूत करने में सहायता मिल सकती है।

निजी विकास परियोजनाओं की पारिस्थितिक जिम्मेदारी

यह इसलिए आवश्यक है क्योंकि निजी शहरी अवसंरचनाएं अब विस्तारित होते शहरों के बड़े हिस्सों पर कब्ज़ा कर चुकी हैं। इस संदर्भ में नियामक संस्थाओं जैसे 'रियल एस्टेट नियामक प्राधिकरण (आरईआरए)', शहरी विकास प्राधिकरणों तथा नगर नियोजन संस्थाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उन्हें यह निर्धारित करना होगा कि निजी विकास परियोजनाओं में पारिस्थितिक उत्तरदायित्व का स्वरूप क्या होगा?

स्थानीय प्रजातियों के वृक्षारोपण, जल-पारगम्य सतहों, जल-संवेदनशील भूदृश्य, जैव विविधता गलियारों, छायादार सार्वजनिक स्थानों और पारिस्थितिक पुनर्स्थापन को अब भी अनिवार्य अवसंरचना निवेश के बजाय वैकल्पिक व्यय के रूप में देखा जाता है। पारिस्थितिक पुनर्स्थापन से संबंधित प्रावधान अब केवल स्वैच्छिक सततता उपाय नहीं रह सकते। उन्हें उस प्रक्रिया का हिस्सा बनने की ज़रूरत है जिसके ज़रिए शहर जिम्मेदार शहरी विकास को परिभाषित करते हैं।

प्रकृति और विकास : प्रतिस्पर्धी नहीं, पूरक एजेंडा

प्रकृति-आधारित समाधानों को नगर निगमों के बजट में मुख्यधारा में लाने के लिए शहरों को यह पुनर्विचार करना होगा कि वास्तव में अवसंरचना किसे कहा जाए? सड़कें, फ्लाईओवर और जल निकासी तंत्र जितने महत्त्वपूर्ण हैं, उतनी ही महत्त्वपूर्ण आर्द्रभूमि, वृक्षावरण, झीलें और जल-पारगम्य भू-दृश्य भी हैं, जो पूरे शहर में गर्मी, जल और प्रदूषण को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं।

भारतीय शहर अब पारिस्थितिकी और विकास को परस्पर विरोधी एजेंडा मानने का जोखिम नहीं उठा सकते। जलवायु संकट ने पहले ही यह स्पष्ट कर दिया है कि जिन शहरों का निर्माण पारिस्थितिक दृष्टिकोण के बिना किया जाता है, वे समय के साथ अधिक असमान, अधिक संवेदनशील और अधिक महंगे सिद्ध होते हैं।

शहरी पारिस्थितिकी की अनदेखी की कीमत आज भारतीय शहरों में स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही है। अब वास्तविक चुनौती यह है कि क्या शहरी विकास पारिस्थितिक तंत्रों को गंभीरता से लिए बिना आगे बढ़ सकता है। ❑

(सह-लेखकः अरविंद लक्ष्मिशा और सीमा मुंडोली)